# "काव्यदोष"

काव्य में गुणों का अभाव ही काव्य दोष है। आचार्य मम्मट के मतानुसार मुख्यार्थ के अपकर्षक तत्व को ही काव्य दोष कहते हैं और काव्य में मुख्यार्थ रस होता है—

"मुख्यार्थहतिर्दोषो रसश्च मुख्यस्तदाश्रयाद्वाच्यः ।
उभयोपयोगिनः स्युः शब्दाद्यास्तेन तेष्वपि सः ॥"

साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ के अनुसार —
"रसापकर्षका दोषाः" अर्थात् रस का अपकर्षक ही काव्य दोष है। आचार्य वामन के अनुसार, "दोष गुण के विपर्यय होते हैं तथा काव्य सौन्दर्य की हानि करते हैं।" — "गुण विपर्ययात्मानो दोषाः।" श्रीपति मिश्र के अनुसार, "जिस पदार्थ के दोष से अच्छी कविता दूषित हो जाती है, उसे काव्य दोष कहते हैं।"

"जो पदार्थ के दोष से बादि कवित नसाइ ।
दूषन तासो कहत हैं श्रीपति पण्डित राई ॥"

काव्य के दोषों को आचार्य विश्वनाथ इस प्रकार मानते हैं—

"रसापकर्षका दोषास्ते पुनः पंचधा मताः।
पदे तदंशे वाक्येऽर्थे सम्भवन्ति रसेऽपि यत् ॥"

अर्थात् 'रस के अपकर्षक दोष पाँच हैं – पददोष, पदांशदोष, वाक्यदोष, अर्थदोष तथा रस दोष।" कुछ प्रमुख काव्य दोष इस प्रकार हैं—

1. न्यूनपदत्व दोष —

जहाँ अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए जितने शब्द अपेक्षित हैं, उससे कम शब्दों का प्रयोग रचनाकार करता है, वहाँ न्यूनपदत्व दोष होता है। उदाहरणार्थ —

"समर्पण लो सेवा का सार,
सजल संसृति का यह पतवार।"
यहाँ सेवा से पहले 'तुम' शब्द अपेक्षित है।

2. अधिकपदत्व दोष —
जहाँ अभीष्ट से अधिक शब्द हों। अनावश्यक शब्दों को निकाल देने पर भी अर्थ व भाव में अन्तर यदि नहीं पड़ता, तो वहाँ अधिकपदत्व दोष होता है। उदाहरणार्थ —

"वह रे अनंत का मुक्तमीन,
अपने असंगसुख में विलीन
स्थित निजस्वरूप में चिरनवीन।"

यहाँ 'निज' शब्द को हटा देने पर भी भाव पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

3. च्युतसंस्कृति दोष —
किसी रचना में जब व्याकरण विरुद्ध प्रयोग कोई रचनाकार करता है तब वहाँ च्युतसंस्कृति दोष होता है। इस दोष के पाँच भेद हैं — लिंग दोष, वचन दोष, काल दोष, सन्धि दोष तथा प्रत्यक्ष दोष। उदाहरणार्थ —

"शशि मुख पर घूँघट डाले
अंचल में दीप छिपाये,
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आये।"

4. क्लिष्टत्व दोष —
ऐसे शब्दों का प्रयोग जिनका अर्थ लगाना सहज नहीं होता, वहाँ क्लिष्टत्व दोष होता है। काव्य में चमत्कार पैदा करने के लिए

इस तरह के प्रयोग कवि करते रहे हैं। इन पदों का अर्थ कठिनता से उद्घाटित होता है, उदाहरणार्थ —

"पदरिपु पद ढाँप्यो न सम्हारति, उलट न पलट धरी
सिव - सुत - वाहन आइ मिले हैं, मनचित बुद्धि हरी।"

5. संदिग्धत्व दोष —

ऐसा पद जो काव्य में संदेह या भ्रम उत्पन्न करता है, उसे संदिग्धत्व दोष कहते हैं। उदाहरणार्थ —

"सिर नदी रही पाया न हृदय,
तू विकल कर रही है अभिनय।"

6. दुष्क्रमत्व दोष —

जहाँ क्रम शास्त्र अथवा लोक के विरुद्ध हो, वहाँ पर दुष्क्रमत्व दोष पाया जाता है।

"नृप! मोको हय दीजिये अथवा मत्त गजेन्द्र।"

7. पतत्प्रकर्ष दोष —

यदि वर्णनीय वस्तु का निरन्तर उत्कर्ष की अपेक्षा अपकर्ष दिखाया जाय तो, वहाँ पतत्प्रकर्ष दोष होता है। उदाहरणार्थ —

"अगर मैं तुमको ललाती साँझ की
नभ की अकेली तारिका, अब नहीं कहता
या शरद के भोर की नीहार न्हाई कुई
टटकी कली चम्पे की।"

8. दूरान्वयदोष —

वाक्य में परस्पर अन्वय न हो पाना ही दूरान्वयदोष उत्पन्न करता है। इससे अभिप्रेत अर्थ में बाधा उत्पन्न होती है। उदाहरणार्थ —

"वो मृग से झरते अनिखण्ड
लोहित वो ज्यों हिंसा प्रचण्ड।"

7. स्वशब्दवाच्यत्व दोष —

जहाँ भाव व्यंग्य रूप में न होकर स्वशब्दवाचक हो जाता है, वहाँ स्वशब्दवाच्य का दोष होता है। उदाहरणार्थ —

"विस्मृति आ, अवसाद घेर ले
नीरवते ! बस चुपकर दे
चेतनते चल जा, जड़ता से
आज शून्य मेरा पर दे।"